पञ्चमवेद महाभारत में पादप विचार

Neel Mani

Department of Sanskrit, Banaras Hindu University, Varanasi-5

Abstract

Vadic literature are highly influencive in every walk of Indian cognitive system. Ved Vyasa's Mahabharat is also an epic in which we see shadow of Vadic view.

In Mahabharat maharshi Vyas has deeply analysed the scientific system of plant cycle. Mahbharat deals botany and applied botany both. Botanical field has been called 7th Shristhi in Mahabharat.

Mahabharat's Shanti Parva clearly deals that our rishis were familiear with the system of photosynthesis. Mahabharat clearly deals that Himalayas is enriched with various medicinal plants. Different types of forests have also been mentioned in Mahabharat. This paper deals ancient environmental knowledge of our Vadic period.

अपौरुषेय वैदिक ज्ञानधारा ने समस्त भारतीय ज्ञानकोश को आप्लावित किया है। ऐसे में पञ्चमवेद के विरुद से अभिहित वेदव्यासकृत महाभारत भी वेदों के प्रभाव से अछूता नहीं है। वैदिक ऋषि मनीषियों ने प्रकृति के गोद में विचरण करते हुए उसके समस्त उपादानों का सूक्ष्मतम एवं यथार्थ दर्शन किया था, उसी बीजभूत पार्यावरणीय चेतना का विकास महाभारत में प्राप्त होता है। महाभारत में वेदव्यास ने पादप जगत से संबंधित अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं वैज्ञानिक सिद्धान्तों को सरल संवादों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

महाभारत के पर्वों में आधुनिक वनस्पति विज्ञान (Botany) की दोनों ही शाखाओं Pure Botany (जिसमें प्रकृति से संबद्ध पौधों का अध्ययन किया जाता हैं) तथा Applied Botany (जिसमें मानव जीवन के लिए उपयोगी पौधों का वर्णन किया जाता है) के अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं। Applied Botany को यहाँ वर्कसायुर्वेद अर्थात् पादप जीवन का ज्ञान कहा गया है। इसे 'भैषज्यायुर्वेद' भी कहा गया है। वेद व्यास के पिता महर्षि पराशर ने वर्कसायुर्वेद द्वारा पादप विज्ञान पर कार्य किया था, जिनका योगदान आज की चिकित्सा पद्धति भी मानती है।

वृक्षादि वनस्पति जगत को 'सातवीं सृष्टि' कहा गया है तथा इसे मानवी सृष्टि से प्राचीनतर सृष्टि मानकर 'वैकृति सृष्टि' भी कहा गया है। श्री कृष्ण पादप जगत के प्रमुख संरक्षक थें, क्योंकि वे जानते थे कि समस्त प्राणि जगत का अस्तित्व इन पर टिका है। स्थावर वृक्षादियों को श्रीमद्भागवत् गीता में पृथ्वी का रोम कहा गया है।[१]

तमसस्तामसा .....।[२]

महाभारत में वनस्पतियों की उत्पत्ति के संबंध में एक स्थान पर ब्रह्मा के वीर्य के तम अंश से तामस वृक्षादि की उत्पत्ति बतायी गई हैं–तमसस्तामसा.....। एक प्रसंग में जरितारि कहते हैं कि अग्नि वनस्पतियों के शरीर हैं। तृण लता आदि की योनि पृथ्वी तथा जल अग्नि के वीर्य हैं।[३]

पादपों में विकास एवं जीवन संचरण को प्रकट करने वाला एक उद्धरण प्राप्त होता है कि नागराज तक्षक द्वारा विष से जलाए गए वटवृक्ष को जब द्विजश्रेष्ठ काश्यप ने अपनी विद्या के बल से जीवित किया तो सबसे पहले उसमें से अंकुर निकला, फिर दो पत्ते हुए। इसी प्रकार क्रमशः पल्लव, शाखा और प्रशाखाओं से युक्त उस महान् वृक्ष को पूर्ववत् खड़ा कर दिया।[४]

शांति पर्व में पादपों में जीवन चेतना को वैज्ञानिक ढंग से सिद्ध करते हुए भृगु कहते हैं कि निबिड़ संयोगविशिष्ट होने पर ही उनमें फल, फूल उत्पन्न होते हैं। स्पर्श तथा उष्णता के कारण पादपों के पत्ते, छाल, फूल, फल मलिन होते हैं तथा जाड़े में प्रकाश के अभाव में मुरझाते हैं। अतः पादप स्पर्श अनुभव करते हैं यह सिद्ध होता है–

"उष्मतो म्लायते वर्णं त्वक्फलं पुष्पमेव वा।
म्लायते शीयर्ते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते।।"[५]

आगे कहते हैं अग्नि, वायु, बिजली के भीषण शब्दों से वृक्षों के फल, फूल झड़ जाते हैं, अत एव वृक्ष अवश्य ही सुनते हैं–

Vijnana Bharati

"वाय्वग्न्यशनिनिष्पेषैः फलं पुष्पं विशीर्यते।

श्रोत्रेण गृहयते शब्दस्तेन शृण्वन्ति पादपाः।।"[६]

महाभारत के अनुसार पवित्र और अपवित्र गंधों का प्रभाव पादपों पर देखने को मिलता है, धूप की गंध से वृक्ष रोगरहित होकर पुष्पित, फलित होते हैं, अतः वे अवश्य ही सूँघते भी हैं-

पुण्यापुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैश्च विविधैरपि।

अरोगाः पुष्पिताः सन्ति तस्माज्जिघ्रन्ति पादपाः।।[७]

शांति पर्व में ही कहा गया है कि वनस्पति भी सुख-दुख, हर्ष क्लेश का अनुभव करते हैं तथा काटे जाने पर अंकुरित होते हैं-

ग्रहणात्सुखदुःखस्य छिन्नस्य च विरोहणात्।

जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते।।[८]

पादपों को दर्शन शक्ति सम्पन्न तथा गमन करने वाला कहा गया है। शान्तिपर्व में तर्क के साथ कहा गया है कि लता वृक्ष को लपेटती हुई स्थान पाकर ऊपर की ओर गमन करती है-

वल्ली वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति।

नाप्यदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात् पश्यन्ति पादपाः।।[९]

पवित्र वृक्षों में जीवन चेतना स्वीकार कर उनका पूजन कर आर्शीवाद प्राप्त किया जाता था। वृक्ष लगाना, उनका संरक्षण तथा उस का दान देना समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाला बताया गया है। अतः वृक्ष अवश्य लगाना चाहिए और उसका पुत्रवत् पालन करना चाहिए-

"अतीतानागते चोभे पितृवंशं च भारत।

तारयेद्वृक्षरोपी च तस्माद् वृक्षान्प्ररोपयेत्।।

तसमात्तडागे वृक्षा वै रोप्याः श्रेयोर्थिना सदा।

पुत्रवत्परिपाल्याश्च पुत्रास्ते धर्मतः स्मृताः।।[१०]"

इस प्रकार वेदों के ही समान महाभारत में भी पर्यावरण के प्रति सचेष्ट रहते हुए पादप संरक्षण का संदेश अनेकत्र दिया गया है। अनुशासन पर्व में तो ऐस संदेश भरे पड़े हैं। एक स्थान पर कहा गया है कि वृक्ष लगाने वाले मनुष्य को इस लोक में कीर्ति तथा उत्तम फल की प्राप्ति होती है, पितृ लोक में सम्मान मिलता है तथा देवलोक में अमरत्व प्राप्त होता है-

लभते नाम लोके च पितृभिश्च महीयते।

देवलोकगतस्यापि नाम तस्य न नष्यति।।[११]

वनस्पति जगत को जीव जगत का आश्रयदाता स्वीकारा गया है-

किंनरोरगरक्षांसि देवगन्धर्व-मानवाः।

तथा ऋषिगणाश्चैव संश्रयन्ति महीरुहान्।।[१२]

वृक्षों की महत्ता का ज्ञान इस बात से भी होता है कि भीष्मपितामह युधिष्ठिर को समझाते हैं कि वृक्षादि पादप पुत्रवत् मनुष्य को स्वर्ग एवं अक्षय लोक प्रदान करने में सहायक होते हैं।[१३] आगे वे कहते हैं कि फलों-फूलों से वृक्ष इस जगत में मनुष्यों को तृप्त करते हैं-

'पुष्पिताः फलवन्तश्च तर्पयन्तीह मानवान्।[१४]

महाभारत के शांतिपर्व से ज्ञात होता है हमारे वैदिक ऋषियों को ज्ञात था कि पादप जगत अपने जीवन रक्षा हेतु स्वतः प्रकाश, जल मिट्टी से अपना भोजन प्राप्त कर विकास करते हैं। महर्षि भृगु भारद्वाज को इस सूक्ष्म सिद्धांत को सरल भाषा से बताते हैं कि वृक्ष जड़ से जल पीते हैं, तथा अशुद्ध जल के सेवन से व्याधिग्रस्त हो जाते हैं, इसे हम साफ देख सकते हैं। अतः पादप रसनेन्द्रिय संपन्न, चखने की शक्ति से युक्त हैं-

पादैः सलिलपानं च व्याधीनामपि दर्शनम्।

व्याधिप्रतिक्रियत्वाच्च विद्यते रसनं द्रुमे।।[१५]

वृक्षादि वनस्पतियों वायु से संयुक्त होकर मिट्टी में अवस्थित खनिज तत्वों एवं जल को अपने मूल (जड़) के द्वारा खींच कर पीते हैं-

वक्त्रेणोत्पलनालेन यथोर्ध्वं जलमाददेत्।

तथा पवनसंयुक्तः पादैः पिबति पादपः।।[१६]

पादप अपनी जड़ों से जो जल, अपने भीतर लेते हैं, उसे उसके भीतर की अग्नि और वायु जीर्ण किया करते हैं। आहार में लिये गये जल आदि खनिज पदार्थों से वृक्ष में स्निग्धता आती है और उनकी वृद्धि होती है-

तेन तज्जलमादत्तं जरयत्यग्निमारूतौ।

आहारपरिणामाच्च स्नेहो वृद्धिश्च जायते।।[१७]

इन श्लोकों से यह ज्ञात होता है कि हमारे ऋषिगण जानते थे कि पादप जगत प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा भोजन बनाते थे। संस्कृत में पादप का अर्थ भी है जो पैरों से जल पिये।

महाभारत में स्थान-स्थान पर पेड़-पौधों के विविध अंङ्गों

Vijnana Bharati

यथा बीज, जड़, तना, शाखा, पत्तियाँ, फूल, फल के उद्धरण दिये गये हैं।[१८] बीजकोष (seed vessal), शस्य (sperm) तथा बीजपत्र (coty ledon) आदि सूक्ष्म पादपाङ्गों का स्वरूपोद्घाटन हुआ है। वृक्ष की टहनी को शाखा, वर्तिका, वृक्षदंड कहा गया है।[१९] यहाँ तक की व्यास जी ने महाभारत के लिए वृक्ष रूपक को नियोजन किया है तथा इसके विभिन्न पर्वों को इस के विविध अंङ्गों जड़, बीज, फल, आदि के रूप में विवेचित किया है।[२०] महाभारत के चरित्रों तथा नीतिज्ञ राजाओं की भी तुलना वृक्षाङ्गों से हुयी है।[२१]

वातावरण की शुद्धता एवं सुन्दरता हेतु कृत्रिम उद्यानों, उपवनों का निर्माण राजप्रसादों के आसपास तथा नगरों के किनारे किया जाता था। अनेक पर्वों में नगर वाटिकाओं को विविध, दुर्लभ लता वल्ली, फल, फूल वाले वृक्षों से सुशोभित बताया गया है।[२२]

मुनियों के सुरम्य तपोवन, आश्रम को देववन को दुर्लभ दिव्य वनस्पतियों से सम्पन्न बताया गया है।[२३] शालिहोत्र मुनि के आश्रम के पवित्र वृक्ष सर्दी, गर्मी, वर्षा आदि को अच्छी तरह सहने वाले बताये गये हैं, जिसका निर्माण मुनि ने अपनी तपस्या द्वारा किया था। समुद्र-मंथन के प्रसङ्ग में असंख्य वृक्ष, दिव्य औषधियों लताओं से आच्छादित मन्दराचल पर्वत[२५] व समस्त कामनाओं का फल देने वाले परिजात वृक्ष[२६] का वर्णन है।

औषधियों वनस्पतियों का वर्णन तथा प्रयोग रोग निवारण तथा शुद्धि आदि अनेक अवसरों पर किया गया है। महाराजा संवरण के पृथ्वी पर गिर जाने पर उनके मंत्री ने राजा के मस्तक को कमल की सुगंध से युक्त ठण्डे जल से सिक्त किया था,[२७] फलस्वरूप उनकी मूर्च्छा टूटी। भीम ने नागों द्वारा दी गयी विषयुक्त खीर को विषनाशक औषधियों के साथ खाया था।[२८] अनुशासन पर्व में औषधियों को विविध प्रकारों तथा गुणों वाला कहा गया है।

ओषध्यो बहुवीर्याश्च बहुरूपास्तथैव च।।[२९]

महाभारत में हिमालय को विविध वनस्पतियों से युक्त चित्रित किया गया है। औषधियों के विविध प्रकार उग्रा, सौम्या, तेजस्विनी, बहुवीर्या और अनेकरूपा बताये गये हैं।-

ज्ञेयास्तूग्राश्च सौम्याश्च तेजस्विन्यश्च ताः पृथक्।[३०]

रससम्पन्न औषधि, फल-फूल से युक्त वृक्षों वाले पर्वत का दान अग्निष्टोम यज्ञ से भी अधिक फलदायी कहा गया है-

ओषधीः क्षीरसंपन्ना नगान्पुष्पफलान्वितान्।

काननोपलशैलांश्च ददाति वसुधां ददत्।।[३१]

वनों में विद्यमान औषधीय वनस्पतियों की विविधता एवं प्रचुरता से तत्कालीन भारत की जैव विविधता का पता चलता है।

वनस्पतियों का प्रयोग विभिन्न जीवनोपयोगी सामग्रियों के निर्माण में होता था। यज्ञ के यूपों, समिधाओं, स्रुव, जूहू, करछुल, आदि यज्ञ पात्र लकड़ी के निर्मित होते थे। भीष्म की चिता हेतु चंदन की लकड़ी, कालेयक, कालागरु आदि सुगंधि का प्रयोग हुआ था।

ततश्चन्दनकाष्ठैश्च तथा कालेयकैरपि।

कालागरुप्रभृतिभिर्गन्धैश्चोच्चावचैस्तथा।।[३२]

वृक्षगण अपने फूलों से देवताओं की, फलों से पितरों की और छाया से अतिथियों की पूजा करते हैं-

पुष्पैः सुरगणान्वृक्षाः फलैश्चादि तथा पितृन्।

छायया चातिर्थीस्तात पूजयन्ति महीरुहाः।।[३३]

तिल, ब्रीहि, यव, उड़द, फलमूल, कालशाक, कांचन वृक्ष के पुष्प, और फल द्वारा श्राद्ध करने से पितृगण प्रसन्न होते हैं-

तिलब्रीहियवैर्माषैरद्भिर्मूलफलैस्तथा।

दत्तेन मासं प्रीयन्ते श्राद्धेन पितरो नृप।।[३४]

ऋषि, मुनि, वनेचर, वनवासी वन्यफलों का सेवन करते थे। मुनिजन तब बस वन्यफल से अपनी क्षुधा तृप्त करते थे-

वन्यं च मुनिभोजनम्।[३५]

बहुत प्रकार को विचित्र स्वादिष्ट फल खाये जाते थे। जैसे राज्यभोग, बदर, इंगुद, काश्मर्य, भल्लातक आदि-

फलानि च विचित्राणि तथा भोज्यानि भूरिशः।

बदरेङ्गुदकाश्मर्यभल्लातकवतानि च।।[३६]

जल, कमल की बेल, सिन्दुवार, बेंत, केवड़ा, करवीर, पीपल, तिल, दूव, कुश, कमल, न्यग्रोध, वट, पलाश, अश्वत्थ, अशोक, शाल, शरस्तम्ब, ताल, ढाक, नरकुल आदि वनस्पतियों का उल्लेख बहुत बार हुआ है।[३७]

पादपों का महात्म्य इसी से पता चलता है कि इसमें पादप जगत को छः भागों में विभक्त किया गया है-वृक्ष, लता, वल्ली, गुल्म, त्वक्सार एवं घास-

स्थावराणां च भूतानां जातयः षट् प्रकीर्तिताः।

वृक्षगुल्मलतावल्ल्यस्त्वक्सारास्तृणजातयः।।[३८]

Vijnana Bharati

वन पर्व में तो सम्पूर्ण पादप जगता का मानों उद्घाटन हो गया है। वनों के विविध प्रकार यथा महावन[३९], निष्कण्टकवन[४०], कदलीवन[४१], निर्जनवन[४२], शालवन, कण्टकितवन, देववन, तपोवन आदि का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त इन्द्रकील पर्वत के वनों, रैवतक पर्वत के वनों, नन्दन[४३], काम्यक[४४], द्वैत[४५], खाण्डव[४६], आदि वनों का भी सुचित्रण हुआ है।

महाभारत में विविध भौगोलिक प्रदेशों के वनस्पतियों का भी उल्लेख हुआ है। मरूस्थलीय वनस्पति[४७] तथा बर्फीले प्रांतो में पादपों की न्यूनता[४८] का भी वर्णन मिलता है।

कुछ वनस्पतियों के विषैले प्रभाव की भी चर्चा है। आक के तीखे, कड़वे, शरीर पर तीक्ष्ण प्रभाव डालने वाले पते को खाकर उपमन्यु की आँखों की रोशनी चली गयी थी।[४९]

वनस्पतियों की छह जातियों वृक्ष, तरू, द्रुम, वनस्पति, नग, जगतीक कही गयी है।[५०] कमल को पद्म, कुमुदुनी, पुण्डरीक, उत्पल, तामरसी, शारदीय कमल आदि अनेकों विरुदों से वर्णित किया गया है।[५१] उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के नियोजन में वनस्पति जगत को सर्वाधिक उपमान बनाया गया है।[५२] वनस्पतियों का दैनिक जीवन में अनेक वस्तुओं के निर्माण में प्रयोग होता था। ताल पत्र से पंखा[५३], पुष्पों से आभूषण[५४], लकड़ी से ईधन[५५] आदि प्राप्त किया जाता था। सजावट[५६], श्रृंगार[५७], भोजन[५८], स्वागत[५९], पूजन[६०], क्रीड़ा[६१], भवन निर्माण, पलंग, आसन आदि में वनस्पतियों का बहुत उपयोग होता था। पुष्प रसों से पेय पदार्थ[६२], बनाए जाते थे, खस[६३] का भी प्रयोग बहुत होता था। रूई का प्रयोग[६४] भी दृष्टिगोचर होता है। सन, राल, मूँज, बल्वज (मोटा घास) और बाँस आदि द्रव्यों को घी में भीगों कर भवन निर्माण में प्रयोग किया जाता था।[६५] पुष्पों में दो प्रकार की गंध मानी गई है-एक इष्ट तथा दूसरा अनिष्ट। पुष्पों के सुगंध के अनुसार उनके विभिन्न उपयोग होते थे।

इस प्रकार महाभारतकार ने पर्यावरण में पादप जगत के महात्म्य को समझा कि सम्पूर्ण जीव जगत इन्हीं पर आश्रित है। अतः स्थान-स्थान पर उन्होंने वृक्षों का वर्णन किया है। पर्यावण की शुद्धता हेतु वृक्षों के रोपण, संरक्षण तथा पूजन पर जितना बल प्राचीन भारतीयों ने दिया इससे यही साबित होता है कि वर्तमान की अपेक्षा महाभारत में पर्यावरणीय भावना बहुत बेहतर थी। कहा भी गया है, जिस वृक्ष की हरी भरी शीतल छाया का आश्रय लिया जाए उसके एक पत्ते से भी द्रोह नहीं करना चाहिए-

"यस्य चार्द्रस्य वृक्षस्य शीतच्छायां समाश्रयेत्।
न तस्य पर्णं द्रुह्येत् पूर्ववृत्तमनुस्मरन्।।"[६६]

सन्दर्भ :

१. श्रीमद्भागवत् गीता २.१०.२३;८.२०.२८

२. महाभारत, अनुशासन पर्व ८५.१३

३. महाभारत, आदिपर्व २३१.७

४. महाभारत आदिपर्व ४३.१०

५. महाभारत शांतिपर्व १७७.११

६. महाभारत शांतिपर्व १७७.१२

७. महाभारत शांतिपर्व १७७.१४

८. महाभारत शांतिपर्व १७७.१७

९. महाभारत शांतिपर्व १७७.१३

१०. महाभारत अनुशासनपर्व ९९.२६,३१

११. महाभारत अनुशासनपर्व ९९.२५

१२. महाभारत अनुशासनपर्व ९९.२९

१३. महाभारत अनुशासनपर्व ९९.२७

१४. महाभारत अनुशासनपर्व ९९.३०

१५. महाभारत शांतिपर्व १७७.१५

१६. महाभारत शांतिपर्व १७७.१६

१७. महाभारत शांतिपर्व १७७.१८

१८. महाभारत आदिपर्व ४३.१०, वनपर्व २६४.३; विराटपर्व २५.९

१९. महाभारत आदिपर्व १५२.२७; वनपर्व ११.७२

२०. महाभारत आदिपर्व १.८८ से ९३, ११०,१११

२१. महाभारत आदिपर्व १३९.६८; वनपर्व २७९.३७

२२. महाभारत आदिपर्व १२७.२९; १५०.१,१० वनपर्व २८३.५१, ५४

२३. महाभारत आदिपर्व १५४.२४-२९; वनपर्व २९४.९,१०

२४. महाभारत कर्णपर्व १५४.१६

२५. महाभारत कर्णपर्व १८.१८-२२,२६,२७,२८

२६. महाभारत कर्णपर्व १७.३७

२७. महाभारत कर्णपर्व १७२.९

२८. महाभारत कर्णपर्व १२८.२५

२९. महाभारत अनुशासनपर्व १०१.२२

३०. महाभारत अनुशासनपर्व १०१.२२

३१. महाभारत अनुशासनपर्व ६१.६९

३२. महाभारत अनुशासनपर्व १५४.१३

३३. महाभारत अनुशासनपर्व ९९.२८

३४. महाभारत अनुशासनपर्व ८८.३

Vijnana Bharati

३५. महाभारत अनुशासनपर्व ५३.१७

३६. महाभारत अनुशासनपर्व ५३.१८

३७. महाभारत, वनपर्व ३१२.४५, विराटपर्व २३.२३; ३०.२३; ५.२८ शल्यपर्व ९.२४, वन पर्व २८०.४२; कर्ण ८५.३७, आदि १२९.१३, द्रोणपर्व १७०.२३, विराटपर्व २३.२३, कर्णपर्व १८.८

३८. महाभारत अनुशासनपर्व, ९९.२३

३९. महाभारत आदिपर्व १७२.२, वनपर्व २७९.२७

४०. महाभारत आदिपर्व २६४.१४

४१. महाभारत आदिपर्व २.१७८, पनपर्व २५.१

४२. महाभारत आदिपर्व १८२.७, वनपर्व २६४.८

४३. महाभारत आदिपर्व २.१५७, वनपर्व २६४.८

४४. महाभारत वनपर्व २८०.४१

४५. महाभारत आदिपर्व २.१५७, वनपर्व २६८.२२

४६. महाभारत आदिपर्व २.१९५, वनपर्व २६४.२७

४७. महाभारत कर्णपर्व ८७.६९, विराटपर्व ३६.१८

४८. महाभारत आदिपर्व १५०.८

४९. महाभारत आदिपर्व ११९.१२

५०. महाभारत आदिपर्व ३.५०, ५१, ५२

५१. महाभारत वनपर्व ३११.७; २८८.१८; आदिपर्व १५०.३२ महाभारत आदिपर्व १५२.४५; ५०.२३; वनपर्व २८७.३

५२. महाभारत विराटपर्व ७.७; ९.१३; शल्यपर्व ९.२०, कर्णपर्व ८९.६ द्रोणपर्व १९.५०

५३. महाभारत कर्णपर्व ९१.६८; वनपर्व २७०.६१, आदिपर्व १७१.११,१२

५४. महाभारत अनुशासन १५१.११

५५. महाभारत विराटपर्व ९.१८

५६. महाभारत वनपर्व २८४.१

५७. महाभारत शल्यपर्व ३.३८; ७.४४

५८. महाभारत आदिपर्व १३४.१९, २४

५९. महाभारत विराटपर्व ९.१३

६०. महाभारत आदिपर्व ४३.२४

६१. महाभारत वनपर्व २७९.३४

६२. महाभारत आदिपर्व १२७.२१

६३. महाभारत कर्णपर्व ८३.३०

६४. महाभारत आदिपर्व १३.१७

६५. महाभारत वनपर्व २०.४१

६६. महाभारत आदिपर्व १४६.१५

६७. महाभारत विराटपर्व १९.१९

Vijnana Bharati